शिक्षकों की कलम से

हमारा प्रयास है कि इस कॉलम के माध्यम से शिक्षक एवं शिक्षक प्रशिक्षक अपने अनुभवों को साझा कर सकें। इस बार तीन अनुभव प्रस्तुत हैं। इन पर अपनी राय दीजिए। साथ ही, एक छोटी-सी गुज़ारिश है कि आप अपने अनुभवों को भी ज़रूर साझा करें।

1. बच्चों का सीखना .... केवलानन्द काण्डपाल
2. भोला जी .... पियुष त्रिवेदी
3. बच्चे और सवाल .... श्रीदेवी वेंकट

भोला जी

पियुष त्रिवेदी

बात वर्ष 2012 की है। शिक्षक के रूप में मेरी नियुक्ति को लगभग दो वर्ष हो चुके थे। मेरे द्वारा कक्षा का संचालन और शिक्षण, दोनों ही कहानियों और प्रसंगों की मदद से ही होता था। मैं बच्चों को कक्षा में खूब कहानी सुनाता।

उन दिनों मैंने चिपको आन्दोलन को कहानी के रूप में बच्चों के बीच प्रस्तुत किया कि कैसे पूरे गाँववासियों ने पेड़ों को कटने से रोकने की कोशिश की और पेड़ों से चिपककर अपना बलिदान देने की घोषणा की। वे लोग कैसे पेड़ों के साथ लिपटे रहे। अन्त में पेड़ काटने वालों ने हार मान ली। छोटे बच्चों की उत्सुकता और जिज्ञासा तो बस देखते ही बनती थी।

मेरी इस कहानी के बाद बच्चों की जिज्ञासाएँ उमड़-उमड़कर बाहर आ रही थीं। वे मुझसे पूछने लगे कि “सर, पेड़-पौधे भी बातें करते हैं क्या?”

नाम से पुकारते। बच्चे कहते, "सर भोलाजी को पानी दे दें क्या?" "सर यह भोलाजी पर चढ़ रहा था।" "सर भोलाजी पर आज इतने पक्षी बैठे हैं।" आदि।

भोलाजी भी कमाल के थे। भोलाजी की छाया में हमारी गाड़ियाँ खड़ी होतीं। पास ही बिजली का खम्भा था जिसके तार भोलाजी के सिर पर अपनी उँगलियाँ घुमाते थे। पास में ही एक रास्ता भी था जिससे गुज़रने वाले ग्रामवासी अक्सर बड़बड़ाते हुए कहते कि "इस झाड़ को काटते क्यों नहीं, कभी बिजली के तार गिर गए तो?" कोई कुछ कहता, कोई कुछ।

'भोलाजी' का कद बढ़ता ही जा रहा था। अचानक एक दिन बिजली विभाग का वाहन शाला में आकर खड़ा हुआ, शायद वह बिजली के तारों को दुरुस्त करने आया हो, पर यह क्या। वे तो कुल्हाड़ी और आरी लेकर पेड़ की ओर बढ़े। बच्चे समझ गए कि आज भोलाजी का अन्तिम दिन है। कुछ ने दबी आवाज़ में मेरे पास आकर विरोध दर्ज किया, पर मैं भी कुछ न कर सका। कुछ ही दिनों में भोलाजी कहानियों में पहुँच गए और बच्चों की यादों से विस्मृत हो गए।

लगभग 3-4 महीनों के बाद मैं डी.एड. करने के लिए डाइट में आ गया और दो वर्षों के लिए अपनी

"हमारे लिए पेड़ क्या करते हैं?" "सर, अगर हम उनसे बात करें तो?" इस तरह उनके अनेक प्रश्न थे जिनके जवाब दे पाना मेरे लिए आसान न था।

मैं बच्चों को पर्यावरण से जोड़ने के लिए उसी समय शाला प्रांगण में नीम के एक पेड़ के पास ले गया। पेड़ के पास जाकर उन्हें उस पेड़ से काल्पनिक रूप से बातें करने के लिए प्रेरित किया। बच्चे पेड़ से तरह-तरह के सवाल करते। प्रश्न पूछने में निडर बनने में यह कला रंग ला रही थी। मैं बच्चों के साथ इस प्रकार के काल्पनिक वार्ता के सत्र निरन्तर आयोजित करता रहा।

अब तक बच्चे या कहूँ कि मेरे मित्र उस पेड़ का नाम रख चुके थे। जो नाम रखा गया, वह था 'भोलाजी'। चूँकि बच्चों ने यह नाम रखा था तो वह पेड़ इसी नाम से पुकारा जाने लगा। सारे बच्चे उसे 'भोलाजी' के

शाला और अपने मित्रों से अलग हो गया। जब मैं डी.एड. पूर्ण कर अपनी शाला वापस गया तो कुछ बदलावों के साथ मेरी पुराने मित्रों और बच्चों से भी मुलाकात हुई। उन्होंने मुझसे बाहर मैदान में चलने को कहा। मैंने पूछा, “क्या बात है भाई? बताओ तो!” उन्होंने कहा, “आइए तो सही।”

मैदान में पहुँचने पर वे वहाँ लगे 4-5 नीम के पेड़ों की ओर इशारा करके बोले, “सर, ये भालाजी, ये भिलाला जी, ये भालूजी और ये सभी भोलाजी के भाई हैं।”

यह सुनकर खुशी के मारे मेरी धड़कनें बढ़-सी गईं। अब वो बच्चे कक्षा छठवीं-सातवीं में पहुँच चुके थे परन्तु मेरी कहानियाँ सुनाने का पता नहीं उन पर क्या असर हुआ था। उन्होंने क्या कल्पनाएँ की होंगी, उनका क्या नज़रिया बना होगा – ये प्रश्न मेरे मन में उमड़ रहे थे।

और इस तरह मेरी कहानियों का जो भी असर रहा हो – भालाजी, भिलालाजी, भालूजी हमारे सामने थे। हम सबके लिए अब यह एक जीवन्त कहानी बन गई थी।

पियुष त्रिवेदी: शासकीय प्राथमिक विद्यालय, बैडियांव, ज़िला खरगोन में सहायक अध्यापक हैं।

सभी चित्र: इशिता बिस्वास: दिल्ली विश्वविद्यालय से समाजशास्त्र में स्नातकोत्तर। सृष्टि स्कूल ऑफ आर्ट, डिज़ाइन एंड टेक्नोलॉजी, बैंगलोर से आर्ट और डिज़ाइन में डिप्लोमा। स्वतंत्र चित्रकार एवं डिज़ाइनर हैं।

यह लेख अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, खरगोन द्वारा जून 2016 में आयोजित *अनुभव लेखन कार्यशाला* के दौरान लिखा गया था।